International Journal of Hindi Research
www.hindijournal.com
ISSN: 2455-2232
Received: 30-07-2024, Accepted: 29-08-2024, Published: 13-09-2024
Volume 10, Issue 3, 2024, Page No. 48-50

बस्तर की सुबहः भोर से लेकर दोपहरी की तपिश तक जीवन रंग

राजेश सेठिया
सहायक प्राध्यापक, हिंदी विभाग, शहीद हरचंद नाइक शासकीय महाविद्यालय, बस्तर, छत्तीसगढ़, भारत

सारांश
डॉ. रूपेन्द्र कवि बस्तर के चर्चित हस्ताक्षर हैं। वे मानवषास्त्री होने के साथ–साथ जीवन जगत को पूरी संवेदना के साथ काव्य में रूपांकन करने में सिद्धहस्त हैं। उनकी ज्ञान मुद्रा प्रकाषन भोपाल से प्रकाषित "बस्तर की सुबह" बस्तर के जनजीवन पर कवि संवेदना की छुअन है। उनके इस पहले काव्य संग्रह में बस्तर के जन जीवन, उसकी संस्कृति, संस्कृति के जीवन तत्व– तुमा, सल्फी, साल वन, तैंदु, महू से आप्लावित और आच्छादित जीवन कर्म मुखरित हुआ है।
बस्तर का कृषक कठोर संघर्ष करता है। वह खेत में तो काम करता ही है, मजदूरी करके भी वह पर्व, त्यौहार और उत्सवों को पूरे भावनात्मक लगाव के साथ मनाता है। उसमें कही कोई कमी नहीं छोड़ता।
कवि बस्तर के वन, पर्यावरण, कृषिकर्म, पर्वत निर्झर, खेत–खलिहान, गाँव सब को अगाध चाह और समर्पण भाव से देखता है, वह उसमें रमना चाहता है, खोना चाहता है।
बस्तर के अद्वितीय पहाड़, पर्वत, वन, निर्झर पर तो उसकी दृष्टि गई ही है, वरण बस्तर की मुख्य समस्या शोषण और अत्याचार तथा नक्सलवाद की समस्या की ओर भी पूरी गंभीरता से वह देखता है। इस समस्या पर कवि की गंभीरता यहाँ तक है कि वह पहाड़ी मैना तक से बंदूक की धांय–धांय तथा गला रेतने की घटना की हूबहू नकल करवा लेता है।
बस्तर के इन वनवासियों की पीड़ा और वेदना का अपना ही रंग है। उनके सामने अस्तित्व की समस्या हैं, वे दो पाटो पुलिस–प्रषासन और नक्सलियों के बीच पीस कर रह गये हैं, उन्हें जासूस समझा जाता है, वह अपने बीते हुए दिनों को, प्रकृति, पर्यावरण युक्त अपने मूल निवास को पाना चाहते है। उनकी अपनी पीड़ा और व्यवस्था हैं, जिसे कवि पूरी तन्मयता और षिद्दत से पूरी संवेदना के साथ रूपायित करता है। यह कवि का प्रथम काव्य संग्रह है और यह नयी आषा जगाता है कि कवि को रूकना नहीं है।

मूल शब्दः बस्तर की सुबह, बस्तर का जीवन, बस्तर की संस्कृति, बस्तर की समस्याएँ, डॉ. रूपेन्द्र कवि की कविताएँ, बस्तर की कविताएँ, बस्तर के वन, बस्तर का हिड़मा नक्सलवाद और बस्तर, नक्सलवाद पर कविताएँ

"बस्तर की सुबह" डॉ. रूपेन्द्र कवि का सद्यः प्रकाषित कविता संग्रह है। यह काव्य हिन्दी के साथ–साथ बस्तर की प्रमुख लोक बोली हल्बी में भी अनुदित होकर साथ–साथ प्रकाषित है। पाठक चाहे तो हल्बी बोली में रचना पढ़े या राष्ट्र भाषा हिन्दी में। दोनों में समान भाव से रसात्मकता एवं काव्यात्मकता का अद्वितीय प्रवाह है। बस्तर माटी की सोंधी गंध के साथ बस्तर के जन जीवन का राग, उसकी अनूठी जीवन शैली की मनमोहनी छवि के दर्षन इसमें है। बस्तर के विख्यात जनजातीय जीवन के नास्टेल्जिक स्वर के साथ रक्तरंजित बस्तर और उसकी रक्तिमता के मूल करणों की खोज का प्रयत्न भी इसमें मुखरित है। इस काव्य संग्रह में बस्तर के संपूर्ण जीवन का चित्र मिलता है। इसमें अलसभोर का मोहक चित्रांकन है, तो आदिवासी जन की पीड़ा, उसका राग और अहं भी दर्षित हैं। बस्तर की सुबह की भोर से लेकर बस्तर की भरी दोपहरी की तपिष और उसकी जलनभरी आँच तक के चित्र इन कविताओं में दृष्टव्य है। बुधराम और बुधरी अलस भोर से लेकर भरी दोपहरी तक खेत में खटते हैं, लेकिन उनकी जिन्दगी में चलना ही लिखा है, खटना ही लिखा है–

"आखिर भोर में
जंगल के रास्ते से खेत पहुंचते
ओस कोहरों के बीच
उनके पैर चुपचाप चलते,
उन्हें ठंड लगती,
कभी वे सोचते
आखिर मकडजाल भी तो बिल्कुल
बिचो बीच मंहगाई की तरह
आडे आती है
पर चलना तो है ही।" [1]

ऐसे कर्मठ किसान बस्तर के बुधराम और बुधरी ही हो सकते हैं। वे साहूकार से, सरकार से लड़ने के लिए भी तैयार रहते हैं और प्रकृति के रंग में रंगकर कर्ज लेकर भी तीज–त्यौहार मनाते हैं और सभी की इच्छाओं को पूरा करते हैं –

"परिवार के पेट पालने
साहूकर से कर्ज लेता
कर्ज चुकाने मजदूरी को भी जाता
हाँ मैं किसान हूँ।
नुवाखानी तिहार के दिन
बच्चों के कपड़ो के लिए
जुगाड लगाता
देवधामी पूजकर
उत्सव मनाता
हाँ मैं किसान हूँ।" [2]

ग्रामीण संस्कृति मे पले–बढ़े कवि को ग्राम्य जीवन और संस्कृति के प्रति स्वाभाविक लगाव है उनकी स्वीकारोक्ति भी हैं कि यह काव्य संग्रह "बस्तर भूमि के प्रति मेरी अगाध, यहां के माटी के प्रति समर्पण, यहाँ के जनजीवन व प्रकृति के प्रति मेरा फर्ज और बस्तर की धरती से दुनियाँ को देखने का नजरिया है।" [3]
प्यारी धरती बस्तर के सीधेपन पर कवि मंत्र–मुग्ध है वह उसका वर्णन करते नहीं अधाता वह सबको आत्मवत देखता हैं, "बस्तर का गांव हूँ" में कविता देखिए –

"खेत हूँ मैं,
खलिहान हूँ मैं,
अभी भी सीधा सा गाँव हूँ मैं,
मेरी संस्कृति मुझमें बसती
जिससे मेरी धरती सजती
पर्व त्यौहार हूँ मैं,
लोक के आलोक का पहरेदार हूँ मैं।" [4]

कविता बस्तर के ग्रामीण जीवन के रूप रंग, पहनावा ओढ़ावा के साथ जीवन के रूप को उभारती हैं, जो उसका सौंदर्य है। भले ही बस्तर के ग्रामीण जनों का मकान मिट्टी का हैं। छत खपरेल की है बियाबन जंगल के बीच बस्तर है परन्तु घाटियों में फूटते झरने की तरह बस्तरिया का जीवन निर्मल है, उसमे कालिमा नहीं हैं–

"मेरी वेषभूषा में लंगोट
कांधे पे टंगिया सजती हैं।
जैसे बुधरी देह मे लपेटे साड़ी
सिर पर महुए से भरी टोकरी रखती है।
तीरकमान व पेज का तुमा हाथ में थामे
मेहनत की पराकाष्ठा हूँ मैं।
बस्तर का गाँव हूँ मैं।" [5]

बस्तर के जनजीवन में तुमा, लांदा, पेज, सल्फी, तर्पनी उसकी संस्कृति का अभिन्न अंग है। आम बस्तरिया के कांवड में सामने हिस्से में पानी, सल्फी, लांदा, मंद भरकर लटकने वाला तुमा आज परिवर्तन के साथ घरों में डायनिंग टेबल की शोभा बढ़ा रहा है–

"बस्तर आये हो साहब
मेरा नाम तो सुना ही होगा,
तुमा ।
————————————
तैदुं पत्ता तोड़ते–तोड़ते
मासे व भीमें मुझसे ही प्यास बुझाते हैं।
जब से प्लास्टिक बोतल ने
मेरे एकाधिकार पर धावा बोला है।
थोड़ा परेषान हूँ।
पर बस्तरिया का संपूर्ण बोध हैं मुझमें।
अब आप जैसे साहबों के डायनिंग टेबल में
नाईट लैंप बनकर लटकने लगा हूँ।" [6]

बस्तर की आरण्यकी संस्कृति में सरगी, महुआ जैसे पेड़ो का खास महत्व है–डंडारी नाच के डंडे भी वनो से ही प्राप्त होते हैं। सरगी और महुआ के पेड़ तो जीवन के अभिन्न अंग ही हैं–

"मैं एक जीवंत संस्कृति हूँ।
बस्तर के जन–जन में बसती हूँ।
मुझसा दूसरा कोई नहीं,
मैं सबके मन मे राज करती हूँ।
शादी–ब्याह के मण्डप में
मेरी टहनी गढ़ती हैं।
जनम–मरन हो या विवाह
मेरी ही तर्पनी चढ़ती है।" [7]

साल के वृक्ष से मकाने बनते है। फूल व बीज को बेचकर आर्थिक आय होती है। इसके नीचे स्वादिष्ट बोड़ा, मषरूम मिलता है। बूटो से दतून और पत्तो से दोना पत्तल मिलता है, साल वृक्ष से देवताओं के लिए धूप भी मिलता है। इसलिए तो कवि कहता है, शाल की महिमा –

"धन्य शाल वृक्ष तुमको
धन्य शाल वन
तुम हो बस्तर की मान
तुम ही हो बस्तर की आन
तुम्हारी महिमा का कर न सके गुणगान।" [8]

बस्तर की वन सम्पदा, कलरव करते पक्षी समुदाय, पहाड़ी मैना की मीठी बोली, झर–झर झरते झरने, खेत–खलिहान, नदी नाले कवि को स्वर्गिम सुख और सौदर्य का आभास कराते हैं। यत्र–तत्र और सर्वत्र उसे मातृभूमि बस्तर आनंदमय लगता है–

"जब खिलखिला के हँसती हो,
तो नजर आती है, धान, कोदो, कुटकी, मंडिया की लहराती बालियाँ
कहीं दिख जाती हैं, बरबस, तिलहन, सरसो के बेषुमार फूल
————————————————————
कहीं कल–कल झरने, कहीं सुरम्य वादियाँ
कहीं कलरव पक्षियां, कहीं मानव बस्तियाँ
हे मातृभूमि
तेरा अद्भूत रूप
तेरा अपार संसाधन
तेरा अचरज भरा रूप।" [9]

इसलिए तो कवि स्वयं को 'बस्तर का तराना' कहता है –

"मैं बस्तर का तराना हूँ
जगदलपुर से बोल रहा हूँ
दंतेवाड़ा दंतेष्वरी माई की पुण्यभूमि से,
सुमर–सुमर कर विनती कर रहा हूँ।
विषाल चितरकोट से
घूमर–घूमर घुमड़ रहा हूँ।
मैं बस्तर का तराना हूँ।
जगदलपुर से बोल रहा हूँ।" [10]

बस्तर का जनजीवन, प्रकृति, पर्यावरण, इंद्रावती नदी, पषु, पक्षी पहाड़ी मैना, वहाँ के नृत्य गाँव का जीवन, कृषक जीवन, मजदूर, बादल, बरसात के साथ–साथ पर्यावरण संरक्षण, होली षिक्षक चिकित्सक, सैनिक जीवन से लेकर वर्तमान कोरोना महामारी, माँ, प्रेयसी, श्रीराम वट सावित्री, अस्तित्व, दायित्वबोध, बस्तर के गांधी श्री धर्मपाल सैनी 'ताऊ' जी तक बड़े मनोयोगा पूर्वक कविताएं कवि ने की है।

कवि की दृष्टि बड़ी पैनी और प्रखर है। वे कहीं रूकते नहीं, उनका मन बस्तर की रमणीयता में ही रमन नहीं करता, वरन वे बस्तर के अंधरे, स्याह पक्षो को भी उद्घाटित करते हैं। जिस नक्सलवाद के कारण बस्तर की एक रक्तिम छवि सारे देष और संसार के समक्ष उभरी। उसके मानवीय और त्रासद पक्ष को भी पूरी संवेदनषीलता से कवि उद्घाटित करते है। मासे, हड़मा, अस्तित्व, मैं और मेरा आज, जल, जंगल और जमीन, पहाड़ी मैना जैसी कविताओं में नक्सलवाद की विभीषिका ध्वनित एवं मुखरित हुई है। एक सीधी सादी भोली लड़की जो ठेकेदार, साहूकार के यहां काम पर जाती थी, जो खेत में तुमा में पेज ले जाकर, सबको चिपड़ी बनाकर पिलाती थी, जो जंगल से बोड़ा छाती निकालने जाती थी, अचानक उसके हाथों में बन्दूक कैसे आ गयी यह विचारणीय है–

"क्या कभी किसी ने जानना चाहा
क्यों वह गाँव की सहज लड़की
अपने बोड़ा–छाती के जंगलों में

टुकना व कडरी की जगह
बन्दूक लेकर घूम रही हैं।
मुझे पूरा यकीन है, जब भी उसे
उसके भाई रामू का प्रतिषोध पूरा हो जायेगा
वह वापस गाँव चली जायेगी।" [11]

नक्सल पीड़ित क्षेत्र का व्यक्ति यदि पढ़ लिख कर अच्छे से खाने–पीने लगता है, तो भी उसे शक की निगाह से देखा जाता है। हड़मा जैसा सहज, सरल और निच्छल व्यक्ति अपने अधिकारों के प्रति सजक हो, विकास की मुख्य धारा से जुड़ भले जाता है, परन्तु वह दो पाटो के बीच पीस कर रह जाता है –

"अब वह थोड़ा सहमा
उदास रहता है
वे भी दोनो तरफ के झमेले में
कभी कोई उसे जासूस कहता है
तो कोई कुरियर मानता है
उसने गुनाह थोडे किया?
पढ़ने शहर क्या गया
उसे सभी बदली–बदली
नजर से देखते हैं –
बेचारा हड़मा ।" [12]

यह केवल एक हड़मा की त्रासदी नहीं है, ऐसे सैकड़ो हड़मा हैं। दो पाटो के बीच पीस रहे इन निरीह जनो को किसी और लोक में जाने की चाह नहीं है। वे अपने अस्तित्व के लिए संघर्ष कर रहे हैं–

"मेरा क्या अस्तित्व है, जानना चाहता हूँ
क्या जिन्दगी को अपने ढंग से जीने का हक नहीं?
अपने जंगल, जमीन के हक से बेदखल
क्या किसी और दुनिया से लाया हुआ हूँ
मंगल में जाने की आस नहीं
अपना बस्तर चाहता हूँ।" [13]

वह तो अपनी आजादी चाहता है, स्वतंत्रता पूर्वक रहना चाहता हैं। वह प्रकृति जीवन का वाषिंदा है। उसे अपनी प्रकृति–संग जीवन की कामना है–

"मैं खेत–खलिहान में काम कर भी खुष था
क्योंकि मैं और मेरा महफूज था।
न लूट खसोट का डर
और न खून खराबा
हमारी कानी कुतिया भी आराम से सोती थी।" [14]

आतंक का ऐसा दौर कि मानवीय बोली, गीतो का हूबहू नकल करने वाली पहाड़ी मैना, बन्दूक की धांय–धांय और गला रेतने की आवाज भी नकल करने लगी है। इन परिस्थितियों में आम आदिवासियों का जीवन उलझा हुआ है

"मैं और मेरा आज बुरी तरह उलझा हुआ है
मेरा कल मुझे पुकार है
न कोई बाधा–कठिनाइ, न दांव–पेंच
बस आजादी
और मेरी जिन्दगी
मेरे जंगल, जमीन जो तुमने ले लिये
आज भी उस राह से गुजरने पर
मुझसे बातें करते हैं "। [15]

इस प्रकार डॉ. रूपेन्द्र कवि का यह पहला काव्य संग्रह "बस्तर की सुबह" बस्तर के जनजीवन, संस्कृति, पर्यावरण के साथ वहां की समस्याओं की एक समग्र तस्वीर हमारे समक्ष उभारती है। कवि पूरी ममत्व भरी दृष्टि से, चाह पूर्ण नजरो से बस्तर माटी को देखता है और पूरी समग्रता से रूपांकित करता है। कवि डॉ रूपेन्द्र के पास एक समग्र कवि दृष्टि है, जो स्थानीयता के साथ विष्व व्यापी समझ भी रखता है, उसे काव्य में रूपांकन का षिल्प कौषल भी है। भाषा शैली और बिंब योजना की दृष्टि से भी उनकी कविताएं आष्वस्त करती हैं। समग्र मानवीयता, पीड़ा और वेदना को पूरी तन्मयता से वे उभारते हैं। आदिवासी जन की पीड़ा, वेदना और विडंबना को पूरी षिद्दत और व्याकुलता से उन्होंने हमारे समक्ष रखा है।
उनको शुभकामनाएं! उन्हें "बस्तर की सुबह" में ही रूकना नहीं है।

संदर्भ सुची

1. बस्तर की सुबह–डॉ. रूपेन्द्र कवि–पृष्ठ क्रं 12
2. वही–पृष्ठ क्रं 12
3. वही–पृष्ठ क्रं 12
4. वही–पृष्ठ क्रं 19
5. वही–पृष्ठ क्रं 5
6. वही–पृष्ठ क्रं 15
7. वही–पृष्ठ क्रं 15
8. वही–पृष्ठ क्रं 28
9. वही–पृष्ठ क्रं 31
10. वही–पृष्ठ क्रं 33
11. वही–पृष्ठ क्रं 95
12. वही–पृष्ठ क्रं 41
13. वही–पृष्ठ क्रं 46
14. वही–पृष्ठ क्रं 52
15. वही–पृष्ठ क्रं 61